एकात्म मानववाद

मनोज कुमार*

सारांश

''भारत में रहने वाला और इसके प्रति ममत्व की भावना रखने वाला मानव समूह एक जन है। उनकी जीवन प्रणाली, कला, साहित्य और दर्शन सब भारतीय संस्कृति है। इसलिये यह संस्कृति भारतीय राष्ट्रवाद का आधार है। इस संस्कृति में निष्ठा रखें तभी भारत एकात्म रहेगा।'' —पं0 दीनदयाल उपाध्याय

भारत ने सम्पूर्ण सृष्टि रचना में एकत्व देखा है। भारतीय संस्कृति की पहली विशेषता यह है कि वह सम्पूर्ण सृष्टि का, सम्पूर्ण जीवन का संकलित विचार करती है। भारतीय संस्कृति सनातन काल से एकात्मवादी है। पं0 दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार इस संसार के कण–कण में परम्परावलम्बन है। भारत ने इसे ही अद्वैत कहा है। अतः यह एकात्म मानव दर्शन ही है, पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानववाद के सर्वांगीण विकास और अभ्युदय के लक्ष्य भी भारतीय दर्शन से ही निरूपित किये थे।

भारतीय राजनीति में पं0 दीनदयाल उपाध्याय एक ऐसे राजनीतिज्ञ के रूप में जाने जाते हैं। जिन्होनें मूल्य खो रही राजनीति में पुनः स्वच्छ, आदर्श एवं मूल्यों को स्थापित किया। पं0 दीनदयाल उपाध्याय एक कुशल व्यवस्थापक, विचारक, दार्शनिक, प्रखर वक्ता, कूटनीतिज्ञ, अर्थवेत्ता, राजनीतिज्ञ एवं एक सामाजिक कार्यकर्त्ता थे। जिन्होनें अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र के लिए समर्पित कर दिया। पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने भारतीय राजनीति के लिए देश को एक सशक्त विपक्ष दिया और विपक्ष की क्या भूमिका होती है और उसका क्या महत्व है वह बताया। पं0 दीनदयाल उपाध्याय प्राचीन भारतीय दर्शन की पुर्नव्याख्या करते हुए समाज को समता, समानता एवं सर्वोदय पर आधारित जीवन जीने का नवीन मार्ग दिया और एक नये दर्शन का प्रतिपादन किया। जिसे एकात्म मानव दर्शन के नाम से जाना जाता है। वर्तमान परिदृश्य में राष्ट्र ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व में मानवता मूलक समाज की स्थापना के लिए एकात्म मानव दर्शन पूर्णतः प्रासांगिक है एवं भविष्य में भी इसकी प्रासंगिकता सदैव बनी रहेगी।

शब्द संकेत : समाजवाद, पूंजीवाद, एकात्म मानववाद, अर्थनीति, अन्त्योदय, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीयकरण, साम्राज्यवाद, उपभोक्तावाद, परम्परावलम्बन।

प्रस्तावना

भारत को देश से बढ़कर एक राष्ट्र के रूप में और इसके निवासियों को परिवार के सदस्य के रूप में मानने के विस्तृत दृष्टिकोण का अर्थ है एकात्म मानववाद। मानवीयता के विस्तार की स्थापना यदि किसी राजनीतिक सिद्धान्त में हुई है तो वह पं0 दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद का सिद्धान्त है। एकात्म मानववाद को पं0 दीनदयाल उपाध्याय आस्था के स्वरूप में लेते थे। एकात्म मानववाद के अर्थो को बढ़ाते हुए उन्होंने कहा था कि ''हमारी आत्मा ने अंग्रेजी राज्य के प्रति विद्रोह केवल इसलिए नहीं किया कि दिल्ली में बैठकर राज करने वाले विदेशी थे, अपितु इसलिए भी कि हमारे दिन–प्रतिदिन के जीवन में, हमारे जीवन की गति में विदेशी पद्धतियां और रीति–रिवाज, विदेशी दृष्टिकोण और आदर्श अड़ंगा लगा रहे थे, हमारे सम्पूर्ण वातावरण को दूषित कर रहे थे, हमारे लिए सांस लेना भी दूभर हो गया था, आज यदि दिल्ली का शासनकर्ता अंग्रेज के स्थान पर हममें से ही एक, हमारे ही रक्त और मांस का एक अंश हो गया है तो हमको इसका हर्ष है, संतोष है, किन्तु हम चाहते है कि उसकी भावनाएं और कामनाएं भी हमारी भावनाएं और कामनाएं हों[1]।''

शोध का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य पं0 दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद के दर्शन का अध्ययन करना। पं0 दीनदयाल उपाध्याय के विचारों एवं कार्यो का अध्ययन करना है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध हेतु द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोतो के संकलन हेतु पुस्तकों, शोध–पत्र पत्रिकाओं एवं इन्टरनेट का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में ऐतिहासिक, वर्णनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

भारतीय संस्कृति की पहली विशेषता यह है कि वह सम्पूर्ण जीवन का, सम्पूर्ण सृष्टि का संकलित विचार करती है। उसका दृष्टिकोण एकात्मवादी अर्थात् Integrated है। अलग–अलग विचार करना विशेषज्ञ की दृष्टि से ठीक हो सकता है,

* शोधार्थी राजनीति विज्ञान विभाग, डी0एस0बी0 परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

परन्तु व्यवहारिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। पश्चिम की समस्या का मुख्य कारण उनका जीवन के सम्बंध में अलग–अलग विचार तथा फिर उन सबको एक साथ जोड़ने का प्रयत्न है। हम यह तो स्वीकार करते हैं कि जीवन में अनेकता अथवा विविधता है, किन्तु उसके मूल में निहित एकता को खोज निकालने का हमने सदैव प्रयत्न किया है, यह प्रयत्न पूर्णतः वैज्ञानिक है। एकात्म मानववाद की अवधारणा के प्रणेता पंडित दीनदयाल उपाध्याय हैं[2]। इसका उल्लेख उन्होंने सर्वप्रथम मुंबई में 22–25 अप्रैल 1965 को चार खंडों में किया था। वर्तमान में एकात्म मानववाद भारतीय जनता पार्टी का मार्गदर्शक दर्शन है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय 1937 ई. में कुछ लोगों के साथ राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से जुड़े और कालांतर में संघ के प्रचारक बनकर संगठन कार्य में जुट गए। वर्ष 1951 तक उन्होंने उत्तर प्रदेश के राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सहप्रांत प्रचारक का दायित्व निभाया। वे 1952 ई. में जनसंघ से जुड़े और उन्हें राष्ट्रीय महासचिव का दायित्व दिया गया। 1967 में वे जनसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष मनोनीत हुए। डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी के देहावसान के पश्चात् पार्टी की जिम्मेदारी पूर्णतया पं. दीनदयाल के कंधों पर आ गई जिसका उन्होंने यथोचित निर्वहन किया। पं. दीनदयाल ने लखनऊ से प्रकाशित होने वाले पांचजन्य (साप्ताहिक) व स्वदेश (दैनिक) का संपादन किया[3]।

भारत की राजनीति, अवसरवादी एवं सिद्धांतहीन व्यक्तियों का अखाड़ा बन गयी है। राजनीतिज्ञों तथा राजनीतिक दलों के न कोई सिद्धांत एवं आदर्श है और न कोई आचार सहिंता। एक दल छोड़कर दूसरे दल में जाने में व्यक्ति को कोई संकोच नहीं होता। दलों के विघटन अथवा विभिन्न दलों की युक्ति भी होती है, तो यह किसी तात्विक मतभेद अथवा समानता के आधार पर नहीं, अपितु उसके मूल में चुनाव और पद ही प्रमुख रूप से रहते है। पं. दीनदयाल समाजवाद और साम्यवाद को कागजी और अव्यावहारिक सिद्धांत के रूप में देखते थे। उनका स्पष्ट मानना था कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में ये विचार न तो भारतीयता के अनुरूप हैं और न ही व्यावहारिक हैं। भारत को चलाने के लिए भारतीय दर्शन ही कारगर वैचारिक उपकरण हो सकता है। चाहे राजनीति का प्रश्न हो, चाहे अर्थव्यवस्था का प्रश्न हो अथवा समाज की विविध जरूरतों का प्रश्न हो, उन्होंने मानवमात्र से जुड़े लगभग प्रत्येक प्रश्न की समाधानयुक्त विवेचना अपने वैचारिक लेखों में की है। भारतीय अर्थनीति कैसी हो, इसका स्वरूप क्या हो, इन सारे विषयों को पं. दीनदयाल उपाध्याय ने भारतीय अर्थनीति विकास की दिशा में रखा है[4]।

वे विकेन्द्रित व्यवस्था के पक्षधर थे। वे तमाम सामाजिक क्षेत्रों के राष्ट्रीयकरण के खिलाफ थे, जिनका राष्ट्रीयकरण तत्कालीन कांग्रेस सरकारों द्वारा धड़ल्ले से किया जा रहा था। वे जानते थे कि यह देश मेहनतकश लोगों का है, जो अपनी बुनियादी जरूरतों के लिए राज्य पर आश्रित कभी नहीं रहे हैं, लेकिन समाजवादी नीतियों से प्रभावित कांग्रेस की सरकारों ने सत्ता की शक्ति का दायरा बढ़ाने की होड़ में समाज की ताकत को राष्ट्रीयकरण के बूते अपने शिकंजे में ले लिया। शिक्षा जैसी बात, जिसके सरकारीकरण का पं. दीनदयाल ने विरोध किया, उसका भी पूर्णतया सरकारीकरण कर दिया गया। आज सरकारी स्कूलों के हालात क्या हैं, ये किसी से छिपा नहीं है। शिक्षा देने का काम सरकार के हाथों में जाना बंदर के हाथ में उस्तरा देने जैसा साबित हुआ। यह काम समाज पर छोड़ा जा सकता था, लेकिन समाजवादी नीतियों के अंध उत्साह ने उनकी एक न सुनी[5]।

पं. दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानववाद के सिद्धांत की गौरवपूर्ण रचना और उद्घोषणा की थी। 1940 और 1950 के दशकों में विश्व में मार्क्सवाद से प्रभावित और लेनिन के साम्राज्यवाद से जनित 'निर्भरता का सिद्धांत" राजनीतिक शैली हो चला था। निर्भरता का सिद्धांत Dependency Theory यह है कि संसाधन निर्धन या अविकसित देशों से विकसित देशों की ओर प्रवाहित होते हैं और यह प्रवाह निर्धन देशों को और अधिक निर्धन करते हुए धनवान देशों को और अधिक धनवान बनाता है। इस सिद्धांत से यह तथ्य जन्म ले चुका था कि राजनीति में अर्थनीति का व्यापक समावेश होना ही चाहिए। पं. दीनदयाल जी नें इस सिद्धांत के उस मर्म को समझा जिसे पश्चिमी जगत कभी समझ नहीं पाया। पंडित जी ने निर्भरता के इस कोरे शब्दों वाले सिद्धांत में मानववाद नामक आत्मा की स्थापना की और इसमें से भौतिकतावाद के जिन्न को बाहर ला फेंका। राजनीति को अर्थनीति से साथ भौतिकता से दूर किन्तु मानव के श्रेष्ठतम का उपयोग और उससे सर्वाधिक उत्पादन। फिर उत्पादन का राष्ट्रहित में उपयोग और राष्ट्रहित से अन्त्योदय का ईश्वरीय कार्य यही एकात्म मानववाद का चरम हितकारी रूप है[6]।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय संस्कृति के समग्र रूप को मानव और राज्य में स्थापित देखना चाहते थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति की समग्रता और सार्वभौमिकता के तत्वों को पहचान कर आधुनिक सन्दर्भों में इसके नूतन रूपकों, प्रतीकों, शिल्पों की कल्पना की थी। उनके विषय में पढ़ते अध्ययन करते समय मेरी अंतर्दृष्टि में वंचित भाव जागृत होता है और ऐसा लगता है कि कुछ था जो हमें पंडित दीनदयाल से और मिलना था, किंतु मिल न पाया। मानस में यह तथ्य उच्चारित होता रहता है कि उनकें तत्व ज्ञान में कुछ ऐसा अभिनव प्रयोग आ चुका था, जिसे वे शब्द रूप में या कृति रूप में प्रस्तुत नहीं कर पाए और काल के शिकार हो गए। उनकें मस्तिष्क में या वैचारिक गर्भ में कोई अभिनव और नूतन सिद्धांत रुपी शिशु था, जो

उनके असमय निधन से अजन्मा और अव्यक्त ही रह गया है। उन्होंने देश की राजनीतिक व्यवस्था व अर्थतंत्र का भी गहन अध्ययन कर शुक्र, बृहस्पति, और चाणक्य की भांति आधुनिक राजनीति को शुद्धता के धरातल पर खड़ा करने की प्रेरणा दी। उन्होंने कहा कि हमारी संस्कृति समाज व सृष्टि का ही नहीं, अपितु मानव के मन, बुद्धि, आत्मा और शरीर का समुच्चय है। उनके इसी विचार व दर्शन को ''एकात्म मानववाद'' का नाम दिया गया, जिसे अब एकात्म मानव–दर्शन के रूप में जाना जाता है। एकात्म मानव–दर्शन राष्ट्रत्व के दो पारिभाषित लक्षणों को पुनर्जीवित करता है, जिन्हें ''चिति'' (राष्ट्र की आत्मा) और ''विराट'' वह शक्ति जो राष्ट्र को ऊर्जा प्रदान करता है[7]।

आजादी के बाद देश की राजनीतिक दिशा स्पष्ट नहीं थी, क्योंकि आजादी के बाद आंदोलन के समय इस विषय पर ज्यादा चिन्तन नहीं हुआ। अंग्रेजी शासनकाल में सबका लक्ष्य एक था ''स्वराज'' लाना लेकिन स्वराज के बाद हमारा रूप क्या होगा? हम किस दिशा में आगे बढेंगे? इस बात का ज्यादा विचार ही नहीं हुआ। पं. दीनदयाल उपाध्याय ने 1964 में कहा था कि हमें ''स्व'' का विचार करना आवश्यक है। बिना उसके स्वराज का कोई अर्थ नहीं। केवल स्वतंत्रता ही हमारे विकास और सुख का साधन नहीं बन सकती। जब तक कि हमें अपनी असलियत का पता नहीं होगा। तब तक हमें अपनी शक्तियों का ज्ञान नहीं हो सकता और न उनका विकास ही संभव है। परतंत्रता में समाज का ''स्व'' दब जाता है। इसीलिए लोग राष्ट्र के स्वराज की कामना करते हैं, जिससे वे अपनी प्रकृति और गुणधर्म के अनुसार प्रयत्न करते हुए सुख की अनुभूति कर सकें[8]।

पंडित दीनदयाल के एकात्म मानववाद के अनुसार व्यक्ति, व्यक्ति का विरोधी न होकर सहयोगी होना चाहिए। जो हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के भीतर ही संभव है। पूँजीवाद अपने से नीचले तबके के लोगों को उपयोग की वस्तु समझकर व्यवहार करते है, जो भेद–भाव को जन्म देती है। पंडित दीनदयाल मानते थे, कि विविधता में एकता का विविध रूपों मे व्यक्तीकरण ही भारतीय संस्कृति का केंद्रस्थ विचार है। यदि हम इस तथ्य को अच्छी तरह समझ कर लें, तो फिर विभिन्न सत्ताओं मे संघर्ष नहीं होगा। यदि संघर्ष है, तो वह प्रकृति अथवा संस्कृति का द्योतक नहीं है, विकृति का द्योतक है। पंडित दीनदयाल यह भी मानते हैं कि संस्कृति प्रकृति की अवहेलना नहीं करती बल्कि प्रकृति में जो भाव सृष्टि है। उनको बढ़ावा देकर दूसरी प्रकृतियों के बाधा को रोकना ही संस्कृति है[9]।

पंडित दीनदयाल ने एकात्म मानववाद का सिद्धान्त 1961–62 में प्रतिपादित किया उन्होंने जब यह देखा कि भारत अनियंत्रित विकास की ओर बढ़ रहा है स्वार्थ परता का जरीया बन गया है लोगों ने इसकी संपदा और संप्रभुता को अपनी निजी संपत्ति मान लिया है। उनके भीतर का एकात्म मानववाद जाग उठा। एकात्म मानववाद एक विचार नहीं एक आंदोलन है। पंडित दीनदयाल का उद्देश्य था कि भारतीयों की आत्मा जागे और पुनः अपनी सभ्यता संस्कृति संस्कार के आधार पर प्रत्येक व्यक्ति के हित चिंता कर विकास करे। ऐसे में तो भारत एक बार पुनः स्वदेशी गुलाम बन जाएगा और वही हो गया। लोग यह कहने से नहीं चुकते। परतंत्रता में इतना अंतर भर आया है पहले गोरे थे अब काले है। काश स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले यह तय कर लिया जाता कि हमारे विकास का आधार क्या होता तो शायद ये विसंगतियां नहीं बनती। पंडित दीनदयाल का एकात्म मानववाद का सिद्धान्त आज भी प्रासंगिक है। जिससे हमारी एकता और अखण्डता को बल मिलेगा[10]।

पंडित दीनदयाल ने संघ की अनेक पत्र पत्रिकाओं का काफी लम्बे समय तक संपादन कार्य भी किया जिसमें लखनऊ से प्रकाशित राष्ट्रधर्म व दिल्ली से प्रकाशित पांचजन्य पत्र प्रमुख हैं। पंडित दीनदयाल एक ऐसे महान कर्मयोगी थे कि पत्र को समय पर निकालने के लिए उन्होंने रात भर कम्पोजिंग का कार्य किया। पंडित दीनदयाल ने बहुत कम समय में ही सम्राट चन्द्रगुप्त जैसे चरित्र पर पुस्तक लिखकर भारतीय इतिहास के एक सांस्कृतिक निष्ठा वाले राज्य का चित्रण किया। निश्चित रूप से पंडित दीनदयाल शब्द और कृति की एकात्मकता के सर्जक थे[11]।

दीनदयाल उपाध्याय द्वारा 1965 में एकात्म मानववाद की अवधारणा का प्रतिपादन किया गया। इसका उद्भव अद्वैत वेदान्त के अद्वैतवादी दर्शन (non & dualistic philosophy) से माना जाता है[12], एकात्म मानववाद ने मानव, पशु या पादप वर्ग की सभी विभिन्न आत्माओं की एकात्मता के विचार का प्रसार किया। इसके द्वारा नस्ल, वर्ण, जाति तथा धर्म पर आधारित अन्तर्निहित विविधता को अस्वीकार करते हुए सभी मनुष्यों को इस बड़े जैविक समुदाय का एक अंग माना गया। जो राष्ट्रीय विचार की एक सामान्य चेतना को साझा करते हैं। विकास के केंद्र में मानव इस दर्शन के अनुसार, भारत के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण था कि वह एक ऐसे स्वदेशी आर्थिक ढाँचे का विकास करे जिसके केंद्र में मानव को रखा गया हो। इसने पाश्चात्य दर्शन को पूर्णतः अस्वीकृत नहीं किया, बल्कि यह समाजवाद तथा पूँजीवाद को क्रमशः उनके गुणों के आधार पर मूल्यांकन करता है। साथ ही यह उनकी अतिवादिता तथा अलगाव की आलोचना भी करता है। यह मानव कल्याण के समग्र विचार का समर्थन करता है। एकात्म मानववाद का दर्शन अनियंत्रित उपभोक्तावाद तथा तीव्र औद्योगीकरण का विरोध करता है, क्योंकि इसका लाभ सर्वाधिक निर्धन व्यक्ति तक नहीं पहुँचता। यह सिद्धांत वर्तमान समय के सभी के लिए समावेशी विकास के संदर्भ में अत्यधिक प्रांसगिक है[13]।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आपराधिक तत्व, धन की शक्ति इत्यादि राजनीति को व्यापक रूप से प्रभावित कर रहे हैं और ऐसी स्थिति में यह अत्यधिक प्रासंगिक हो जाता है। चूँकि यह दर्शन परिवार तथा समाज की राष्ट्र–निर्माण संबंधी भूमिका को रेखांकित करता है अतः इससे परिवार की संस्था को भी सशक्त किया जा सकता है। एक ऐसे विश्व में, जहां जनसंख्या का एक बड़ा भाग निर्धनता से ग्रसित है, इसका प्रयोग विकास के एक वैकल्पिक मॉडल के रूप में किया जा सकता है जिसमें सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक आवश्यकताएँ समन्वित हो तथा जिसकी प्रकृति समेकित एवं संधारणीय हो[14]। दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार, एकात्म मानववाद का शाब्दिक अर्थ मानव के शरीर, मस्तिष्क, बुद्धि और आत्मा को चार पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से एकमत होते हुए तदनुरूप होना है। यह दर्शन मानव–जाति की मानसिक स्वतंत्रता तथा उसके पशुत्व से मनुष्यत्व और फिर मनुष्यत्व से देवत्व तक की यात्रा का परिचय प्रस्तुत करता है। वास्तव में, यह मानव के सर्वोच्च आत्मिक और मानसिक विकास का दर्शन है। यह एक ऐसा नवीन घोषणा–पत्र है, जिसमें भौतिक तत्वों पर नैतिक मूल्यों की सर्वोच्चता स्थापित की गयी है। एकात्म मानववाद में इन सभी वैचारिक धाराओं का मिलन होता है और जिसके परिणामस्वरुप एक नवीन तत्त्व का जन्म होता है, जिसके द्वारा दीनदयाल उपाध्याय स्वतंत्रता के बाद भारत में विकास के पश्चिमी प्रतिमान के खिलाफ जनजागरण का समर्थन करते हैं। एकात्म मानववाद, भारतीय सभ्यता में आधुनिक भोगवादी सभ्यता के उदय की समालोचना है[15]।

एकात्म मानववाद पाश्चात्य सभ्यता के सैद्धांतिक आधार को रचनात्मक चुनौती है। हिंदू–धर्म एवं उसकी समृद्ध परंपराओं से सभ्यतामूलक संसाधनों का भरपूर प्रयोग करते हुए उपाध्याय ने औद्योगिक पूंजीवाद, साम्राज्यवाद तथा मार्क्सवाद की आलोचना करने के लिए एक नवीन सैद्धांतिक ढांचे का प्रतिपादन किया। वहीं दूसरी ओर उन्होंने कुछ मौलिक अवधारणाओं, चित्त और वृत्ति का विकास किया, जो वर्तमान समय में काफी प्रासंगिक है[16]।

भारतीय राज्य का आदर्श धर्मराज्य रहा है। धर्मराज्य से अर्थ कोई मजहबी राज्य नहीं हैं बल्कि यह एक असांप्रदायिक राज्य है। सभी पंथों और उपासना पद्धतियों के प्रति सहिष्णुता एवं समादर का भाव भारतीय राज्य का आवश्यक गुण है। अपनी श्रद्धा और अंतःकरण की प्रवृत्ति के अनुसार प्रत्येक नागरिक को उपासना का अक्षुण्ण अधिकार है। राज्य के संचालन अथवा नीति निर्देशन में किसी भी व्यक्ति के साथ मत या संप्रदाय के आधार पर भेदभाव नहीं हो सकता, यही वास्तविक धर्म आधारित राज्य है[17]। यह धर्मराज्य किसी व्यक्ति को अथवा संस्था को सर्वसत्ता–संपन्न नहीं मानता, इसमें प्रत्येक व्यक्ति नियमों और कर्तव्य से बंधा हुआ है। निरकुंश और अधिनायकवादी प्रवृत्तियों को रोकने तथा लोकतंत्र को स्वच्छंदता में विकृत होने से बचाने में धर्मराज्य ही समर्थ है। राज्य की अन्य कल्पनाएं अधिकारमूलक है, किंतु धर्मराज्य में कर्तव्यभाव प्रधान है। भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा लेकर चलने वाले भी कुछ पक्ष है। किंतु वे भारतीय संस्कृति की समानता को उसकी गतिहीनता समझ बैठे हैं और इसलिए बीते युग की पीढ़ियों अथवा यथास्थिति का समर्थन करते हैं। संस्कृति के क्रांतिकारी तत्व की ओर उनकी दृष्टि नहीं जाती। वास्तव में समाज में प्रचलित अनेक कुरीतियां जैसे– छुआछूत, जाति–भेद, दहेज–प्रथा, मृत्यु–भोज, नारी–अवमानना इत्यादि तथा जमींदारी, जागीरदारी आदि व्यवस्थाएं भारतीय संस्कृति और समाज के स्वास्थ्य की सूचक नहीं, बल्कि रोग के लक्षण हैं। जातिगत भेदभाव जैसी प्रवृत्तियां तो व्यावसायिक श्रम विभाजन की परिस्थितियों में परिवर्तन के बाद भी चलती रहने पर रूढ़ियाँ बन जाती हैं। भारत के अनेक महापुरुष, जिनकी भारतीय परंपरा और संस्कृति के प्रति अनन्य निष्ठा थी, वे सब इन बुराइयों के विरुद्ध लड़े। अनेक अनुपयुक्त आर्थिक और सामाजिक विचारों का विश्लेषण किया जाये तो पाएंगे कि हमारी संस्कृति चेतना के क्षीण होने के कारण ये रूढ़ियाँ किसी विशेष आवश्यकता की पूर्ति के लिए उपाय विदेशियों द्वारा थोपी गई व्यवस्थाएं मात्र थी। भारतीय संस्कृति के नाम पर उन्हें जीवित रखना अपने निहित स्वार्थों की रक्षा के लिए हास्यास्पद प्रयत्न मात्र हैं[18]।

पं. दीनदयाल उपाध्याय का चित्त समग्रता में एकात्म था इसीलिए रिक्तता वाले क्षेत्रों में स्वयं को समर्पित करने में वह बचपन से ही संलग्न थे। पं. दीनदयाल छात्र जीवन में ही संघ में शामिल हो गये थे। संघ के जीवनव्रती प्रचारक भाऊराव देवरस जैसे महान सेवा व्रती का सान्निध्य उन्हें प्राप्त हुआ ही साथ ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. केशवराम बलिराम हेडगेवार का सान्निध्य भी उन्हें प्राप्त हुआ। छात्रावास में लगने वाली शाखा में वे प्रतिदिन जाते थे तथा उनका तन, मन और धन पूरी तरह से राष्ट्र को समर्पित हो गया[19]।

पं. दीनदयाल उपाध्याय घर गृहस्थी की तुलना में देश की सेवा को अधिक श्रेष्ठ मानते थे। उन्होंने अपने जीवन के एक–एक क्षण को पूरी रचनात्मकता और विश्लेषणात्मक गहराई से जिया है। पत्रकारिता जीवन के दौरान उनके लिखे शब्द आज भी उपयोगी हैं। प्रारम्भ में समसामयिक विषयों पर वह 'पालिटिकल डायरी' नामक स्तम्भ लिखा करते थे। पं. दीनदयाल उपाध्याय ने राजनीतिक लेखन को भी दीर्घकालिक विषयों से जोड़कर रचना कार्य को सदा के लिए उपयोगी बनाया है। पं. दीनदयाल उपाध्याय ने बहुत कुछ लिखा है। जिनमें एकात्म मानववाद, लोकमान्य तिलक की राजनीति, जनसंघ का सिद्धांत

और नीति, जीवन का ध्येय राष्ट्र जीवन की समस्यायें, राष्ट्रीय अनुभूति, कश्मीर, अखंड भारत, भारतीय राष्ट्रधारा का पुर्न प्रवाह, भारतीय संविधान, इनको भी आजादी चाहिए, अमेरिकी अनाज, भारतीय अर्थनीति, विकास की एक दिशा, बेकारी समस्या और हल, टैक्स या लूट, विश्वासघात, दि टू प्लान्स, डिवैलुएशनः ए ग्रेटफॉल आदि। उनके लेखन का केवल एक ही लक्ष्य था भारत की विश्व पटल पर लगातार पुनर्प्रतिष्ठा और विश्व विजय[20]।

पं. दीनदयाल उपाध्याय ने भी अपने विचार रखे उनके विचार भारत को मजबूत बनाने अपने पैरों पर खड़े होने से सम्बन्धित थे, कोई वाद नहीं थे बल्कि एक दर्शन था। उनके विचार प्राचीन अवधारणा 'वसुधैव कुटुम्बकम' एवं 'सर्वे भवन्तुसुखिनः' का ही दूसरा स्वरूप है[21]। दीनदयाल का चिंतन शाश्वत विचारधारा से जुड़ता है। इसके आधार पर वह राष्ट्रभाव को समझने का प्रयास करते हैं। मनुष्य के जीवन की सुसंगतता व सामंजस्य मानव समूह तथा सृष्टि के साथ कैसे स्थापित होगा और जीवन से दुख, अभाव, शोषण, विषमता को हटाकर सुख, समृद्धि, सामंजस्य व सेवा भाव लाने वाली नीतियाँ क्या होंगी[22]। इन सारे प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास है– एकात्म मानव दर्शन। एकात्म मानव दर्शन, अन्त्योदय जैसे विचारवाद की श्रेणी में नहीं आते। यह दर्शन है, जो हमारी ऋषि परम्परा से जुड़ता है। इसके केन्द्र में व्यक्ति या सत्ता नहीं है। जैसा कि पश्चिमी या वामपंथी विचारों में कहा गया है। इनके दर्शन में व्यक्ति, मन, बुद्धि, आत्मा सभी का महत्व है। प्रत्येक जीवन में आत्मा का निवास होता है। आत्मा को परमात्मा का अंश माना जाता है। यही एकात्म दर्शन है। इनमें समरसता का विचार है। इसमें भेदभाव नहीं है। व्यक्ति का अपना हित स्वाभाविक है, लेकिन सब कुछ नहीं है। उपभोगवाद से लोक कल्याण सम्भव नहीं है। इसमें व्यक्ति का कल्याण भी नहीं है, यदि ऐसा होता तो भौतिकवाद की दौड़ में व्यक्ति को कभी तो संतोष मिलता, पर ऐसा नहीं हुआ। जो मिल गया, फिर उसके आगे की चिन्ता में दौड़ शुरू हो जाती है। मन कभी भी संतुष्ट नहीं होता। व्यक्ति प्रारम्भिक इकाई मात्र है। लेकिन वह परिवार का हिस्सा मात्र है। परिवार का हित हो तो व्यक्ति को अपना हित छोड़ देना चाहिए, समाज का हित हो तो परिवार का हित छोड़ देना चाहिये। देश का हित हो तो समाज का हित छोड़ देना चाहिये। राष्ट्रवाद का यह विचार प्रत्येक व्यक्ति में होना चाहिये[23]।

विश्व मानवता को भारत की पुण्य धरती के लाखों लाख ऋषियों के ज्ञान का सार तत्व एकात्ममानव दर्शन के रूप में पहुंचाने वाले पं. दीनदयाल उपाध्याय की जघन्य हत्या हुई और 11 फरवरी 1968 की रात ऋषि ज्योति परम ज्योति में एकाकार हो गई। उनका शव मुगल सराय रेलवे स्टेशन से प्राप्त हुआ था। इस रेलवे स्टेशन का नाम हाल ही में बदल कर पंडित दीनदयाल उपाध्याय रख दिया गया है[24]।

निष्कर्ष

किसी ने सच ही कहा है कि कुछ लोग सिर्फ समाज बदलने के लिए जन्म लेते हैं और समाज का भला करते हुए ही खुशी से मौत को गले लगा लेते हैं। उन्हीं में से एक हैं दीनदयाल उपाध्याय। जिन्होंने अपनी पूरी जिन्दगी समाज के लोगों को ही समर्पित कर दी। दीनदयाल उपाध्याय के विचार आज भी प्रासंगिक हैं। इन्हीं के माध्यम से देश की वर्तमान समस्याओं का समाधान हो सकेगा। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानववाद के दर्शन पर श्रेष्ठ विचार व्यक्त किये हैं। एकात्म मानववाद के विचार आज के युग में भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने कि उनके काल में थे। एकात्म मानववाद पर उनका कहना था कि हमारे यहां समाज को स्वयंभू माना गया है। राज्य एक संस्था के नाते है। राज्य के समान और संस्थायें भी समय–समय पर पैदा होती हैं।

वर्तमान का भारत एकात्म मानववाद में आशा की नई किरण खोज रहा है। एकात्म मानववाद दर्शन, मानव के सामाजिक–आर्थिक तथा मानसिक विकास, राष्ट्रीयता एवं राष्ट्रीय चुनौतियों तथा समकालीन समस्याओं पर होने वाले किसी भी विचार–विमर्श का अनिवार्य अंग बनता जा रहा है। यह भारत का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि हमारे यहाँ देश के महापुरुषों चिंतकों तथा महान विचारकों को जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन भारत की प्रगति समृद्धि तथा विकास के लिये समर्पित कर दिया था। उन्हें हमारे भारतीय नेताओं ने दल तथा जाति के आधार पर बाँटकर उनका बंटवारा अपने–अपने हितों व स्वार्थ के लिये कर लिया। इनके विचारों का नीतियों का देश के हित में प्रयोग नहीं किया गया। चाहे वह डॉ. भीमराव अम्बेडकर हो। जिन्होंने सम्पूर्ण राष्ट्र के विकास की बात की पर उनके विचारों को तोड़ मरोड़ कर एक विशेष जाति तथा दलित नेता के रूप में प्रस्तुत किया गया। इसी प्रकार चाहे लोहिया हो, चाहे पं. दीनदयाल उपाध्याय हों, सभी एक विशेष दल के ब्राण्ड एम्बेसडर बन के रह गये। इनका प्रयोग समय–समय पर अपने हितों को पूरा करने के लिये किया जाता रहा। सादा जीवन उच्च विचार की प्रतिमूर्ति पं. दीनदयाल के विचारों में देश की मिट्टी की महक को अनुभव किया जा सकता है। वह वास्तव में राजनीति में ऋषि परम्परा के मनीषी थे, वे भारतीय जनसंघ से अवश्य जुड़े रहे, फिर भी दलीय संकीर्णताओं से ऊपर थे। वे राजनीति का अध्यात्मीकरण चाहते थे। उनकी आस्थायें प्राचीन अक्षय राष्ट्र जीवन की जड़ों से रस ग्रहण करती थी, किन्तु वे रूढ़िवादी नहीं थे। इस रूप में उन्होंने श्रेष्ठ शक्तिशाली और संतुलित राष्ट्र की कल्पना की थी। तत्कालीन व्यवस्था तथा परिस्थितियों में

आपके विचारों को तथा दर्शन को महत्व नहीं दिया गया गलत नीतियों का अनुसरण कर आज देश को तथा पूरे विश्व को विनाश के कगार पर पहुँचा दिया गया। आज की परिस्थितियों को देखते हुये पं. दीनदयाल के विचार व दर्शन ही हमें सही दिशा दे सकते हैं।

आज शिक्षा की व्यवस्था भी चिंता उत्पन्न करती है। एक तरफ महंगी शिक्षा है। इसका लाभ सीमित वर्ग उठा सकता है। दूसरी ओर जहां शिक्षा सस्ती है, उनकी दशा खराब है। वहां मूलभूत सुविधाएं भी नहीं हैं। आज शिक्षा की भांति चिकित्सा की दशा है। यह भी व्यवसाय का रूप धारण कर रही है। दीनदयाल जी निःशुल्क चिकित्सा का सुझाव देते हैं। वह मानते हैं कि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था मानव का विकास करने में असमर्थ सिद्ध हुई है। इसके विरोध में समाजवादी अर्थव्यवस्था आई। यह भी विफल हुई। इसने पूंजी का स्वामित्व राज्य के हाथों में देकर संतोष कर लिया। दीनदयाल का अंत्योदय विचार आज भी प्रासंगिक है।

सन्दर्भ सूची

1. https://shabdshaktinews.in/p=29557
2. दिव्यकीर्ति, डॉ0 विकास / जैन निशान्त, निबन्ध–दृष्टि, दृष्टि पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2016 पृष्ठ 12.29
3. उपाध्याय, दीनदयाल, एकात्म मानववादः तत्व मीमांसा ♦ सिद्धान्त ♦ विवेचन, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली संस्करण–2014 पृष्ठ 178
4. शर्मा, डॉ. महेश चंद्र, पं0 दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वाङ्मय, स्वरांजलि पब्लिकेशन, पृष्ठ 151–152
5. निशंक डॉ0 रमेश पोखरियाल, प्रखर राष्ट्रभक्त एकात्म मानववाद के प्रणेता पं0 दीनदयाल उपाध्याय, डायमंड बुक्स नई दिल्ली संस्करण–2019 पृष्ठ 156
6. कुमार बसन्त, एकात्म मानववाद भाजपा का संकल्प, सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–2015 पृष्ठ 127
7. https://www.prabhasakshi.com/personality/pandit-deendayal-upadhyay-death-anniversary?utm_source= Prabhasakshi-amp&utmmedium=Referral&utm_campaign=Prabhasakshi-amp
8. https://www.prabhasakshi.com/column/thoughts-and-philosophy-of-deendayal-upadhyay-are-relevant?utm_source=Prabhasakshi-amp&utm_medium=Referral&utm_campaign=Prabhasakshi-amp
9. https://rashtriyashiksha.com/deendayal-upadhyays-vision-and-philosophy-
10. https://www.iasbook.com/hindi/ekatamak-manavvad-ki-avdharana-evam-iski-prasangikta/
11. https://www.prabhasakshi.com/personality/deendayal-upadhyay-idea-of-ekatm-manavvad-is-still-completely-relevant-today
12. https://hindi.webdunia.com/current-affairs/pandit-deen-dayal-upadhyay-deen-dayal-upadhyay-116121500082_1.html
13. https://web.archive.org/web/20190328105847/http://cgshabd.com/
14. https://web.archive.org/web/20150519055016/http://www.deshbandhu.co.in/newsdetail/2599/4/126
15. https://web.archive.org/web/20150516151700/http://bjpmp.org/contentdetails.asp?pageID=3
16. https://hi.wikipedia.org/wiki/
17. https://www.drishtiias.com/hindi/mains-practice-question/question-647
18. https://www.pravakta.com/integral-humanism-a-divine-principle/
19. https://www.drishtiias.com/hindi/mains-practice-question/question-647/pnt
20. 20 http://conference.nrjp.co.in/index.php/DDU_SHAHJAHANPUR/issue/view/3
21. https://www.lovesove.com/deendayal-upadhyaya-quotes-thoughts-lines/
22. https://www.navodayatimes.in/news/khabre/deen-dayal-upadhyay-birth-anniversary/95825/
23. www.theindiapost.com
24. www.hindi. webdunia.com